International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(5): 09-12

International Journal of Sanskrit Research
अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(5): 09-12
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-07-2017
Accepted: 08-08-2017

डॉ. वेद प्रकाश मिश्र
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, डॉ. सी. वी. रामन विश्वविद्यालय, कोटा बिलासपुर (छ.ग.), भारत

राकेश कुमार
एम.फिल, सेमेस्टर– द्वितीय, डॉ. सी. वी. रामन विश्वविद्यालय, कोटा बिलासपुर (छ.ग.), भारत

Correspondence
डॉ. वेद प्रकाश मिश्र
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, डॉ. सी. वी. रामन विश्वविद्यालय, कोटा बिलासपुर (छ.ग.), भारत

मनुस्मृति में राजधर्म का समीक्षात्माक अध्ययन

डॉ. वेद प्रकाश मिश्र, राकेश कुमार

सरांश
भारत वर्ष एक महान् देश है। और इसकी प्राचीनता पुरी दुनिया में विख्यात है। इस देश के साहित्य, वेद, दर्शन, उपनिषद, ब्राह्मणग्रन्थ एवं मनुस्मृति आदि नानाविध साहित्य संपूर्ण जगत के कल्याण के लिए आज भी प्रासंगीक है। एक ओर जहाँ वेदों में ज्ञान, कर्म, उपासना तथा विज्ञान की बातें कही है वहीं दूसरी और उपनिषद आदि ग्रन्थ मानव समाज को मोक्षत्व दिलाने का मार्गदर्शन करता है। मनुस्मृति जैसा पावन धर्मशास्त्र मानव जीवन को उन्नत बनाने का विधियों को लिये हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है। महर्षि मनु ने आदि काल में मानव जीवन को उन्नत प्रगतिशील और राष्ट्ररक्षा, राजधर्म और मानव धर्म के मापदण्डों के द्वारा राष्ट्र को सुबल और सुव्यवस्थित बनाने का भी महत्वपूर्ण कार्य किया है। महर्षि मनु ने अपने ग्रन्थ में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जहाँ संस्कारों का वर्णन किया है वहीं मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने के लिए राजधर्म का भी वर्णन किया है। महर्षि मनु ने निरूसन्देह सर्वोत्कृष्ट राजधर्म व्यवस्था का सृजन किया। आदिकाल के राजाओं को हम देखें, राजा राम से लेकर युधिष्ठिर तक और जितने भी चक्रवर्ती सम्राट आर्यावर्त्त में हुए उन सभी की व्यवस्थाओं में राजधर्म झलकता है। राजर्षि मनु ने अपने ग्रन्थ मनुस्मृति में राजधर्म का वर्णन बडे ही चारित्रिक और राष्ट्र निर्माण का मूल मंत्र पिरोया है। ग्रन्थकार अपने इस महान् ग्रन्थ के द्वारा मानव समाज को संगठित वा उन्नत बनाने के लिये अनेक माध्यमों से राजधर्म की व्याख्या कर राजा, मंत्री, सभासद, प्रजा तथा इन पर प्रयुक्त होने वाले दण्ड विधान, कर व्यवस्था, तथा न्याय व्यवस्था, का बहुत सुन्दर ही वर्णन किया है अपितु इस ग्रन्थ में अनेक विषय है परन्तु मैंने अपने शोध का विषय मनुस्मृति में राजधर्म लिया है जिसको कई भागों में विभाजित कर उसके विषय में वर्णन किया जायेगा।

कूट भाब्दः मनुस्मृति, राजधर्मए दर्शन, उपनिषद, ब्राह्मणग्रन्थ

प्रस्तावना
राजर्षि मनु ने राजधर्म में सभी के हितों का विशेष ध्यान रखा है चाहे वह किसी भी वर्ग का क्यों न हो। इसलिए मनुस्मृति में वर्णित राजधर्म आज भी प्रासंगीक है। अपने विभिन्न आयामों के द्वारा राजनैतीक उत्थान के लिये यह ग्रन्थ राष्ट्र का जीता जागता प्रमाण है। इसलिए राजधर्म विधायक सूत्रों का प्रणयन महर्षि मनु ने आदि काल से मानव जाति का विकास करने के लिए सर्वो युगिन चित्र अंकित किया है। अपितु इस ग्रन्थ में अनेक विषय हैं। परन्तु राष्ट्र निर्माण के लिए राजधर्म सर्वोत्कृष्ट है इसलिए मैंने अपने शोध पत्र का विषय मनुस्मृति में राजधर्म लिया है। जिसमें राजधर्म के विविध विषयों को विभाजित कर उसके विषय में विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

1. राजधर्म
2. राष्ट्र
3. आदर्श प्रजातन्त्र
4. मुख्यराज्याधिकारी

(क) राजा के गुण
(ख) मंत्री
(ग) मंत्रियों के गुण
(घ) राजदूत

5. कार्य विभाग
6. राजकोष
7. क्षात्रधर्म
8. राजा का राज्य के प्रति कर्म
9. राष्ट्र रक्षा हेतु स्त्रियाँ

1. राजधर्म

राजधर्म का आधार वेद, मनुस्मृति, उपनिषद, ब्राह्मण, ग्रंथ, आरण्यक आदि वैदिक ग्रन्थ है। राजधर्म को सभी तत्वों का सार कहा गया है। राजधर्म के बिना देश का विकास नहीं होता, आरम्भ में न तो राजा था न ही दण्ड व्यवस्था थी जिसके फलस्परूप मानवों में मोह मत्सर आदि का प्रवेश हो गया। अतरू राजधर्म को पूर्णरूप से बचाने के लिए महर्षि मनु ने मनुस्मृति की रचना कर समस्त मानव समाज को एकत्रित करने का महान् कार्य किया। महर्षि मनु ने अनेक विध व्यव्स्थाओं को कहने के पश्चात् राजधर्म पर भी अपना सुदृढ विचार प्रस्तुत किया है वे कहते हैं–

राजधर्मान् प्रवक्ष्यामि यथावृत्तो भवेन्नृपरू।
संभवश्च यथा तस्य सिद्धिश्च परमा यथा।। [1]

जैसा परम विद्वान् ब्राह्मण होता है वैसा विद्वान् सुशिक्षित होकर क्षत्रिय को योग्य है कि इस सब राज्य की रक्षा न्याय से यथावत् करे।

त्रीणि राजाना विदथे पुरूणि परि विश्चानि भूषथरू सदांसि।। 2

ईश्वर उपदेश करता है कि राजा और प्रजा की पुरुष मिलकर सुख प्राप्ति और विज्ञान वृद्धि कारक राजा प्रजा के सम्बन्ध रूप व्यवहार में तीन सभा अर्थात् विद्यार्य्यसभा, धर्मार्य्यसभा और राजार्य्यसभा नियत करके बहुत प्रकार के समग्र प्रजा सम्बन्धि मनुष्यादि प्राणियों को सब ओर से विद्या प्रदान करें।

तं सभा च समितश्च सेना च।। [3]
सभ्यं सभां मे पाहि ये च सभ्यारू सभासदरू।। [4]

अर्थात् उस राजधर्म को तीनों सभा संग्राम आदि की व्यवस्था और सेना मिलकर पालन करें।
सभासद् और राजा को योग्य है कि राजा सब सभासदों को आज्ञा दें कि हे सभा के योग्य मुख्य सभासद् मेरी सभा की धर्मयुक्त व्यवस्था की रक्षा कर। और ये जो सभा के योग्य सभासद् हैं वे भी सभा के व्यवस्था का पालन किया करें।
अर्थात् वर्तमान में यह संसद तथा मंत्रियों और प्रतिनिधि मण्डल, तथा विधायक से हैं। प्राचीन काल में सभासद ही कानून बनाने व उसे राज्य मे पालन करवाने का कार्य किया करते थे।जैसे आज संसद भवन मे कानून व्यवस्था अर्थात नियम बनाने का होता हैं,और उतना पालन राज्य के प्रत्येक नागरिक करता हैं।

2. राष्ट्र

भीष्म जी राष्ट्र की रक्षा तथा बुद्धि का उपाय बताते हुए कहते हैं –राष्ट्र का विकाश ग्रामों में किया जाता हैं। प्रत्येक ग्राम का एक ग्रामाधिपति होता हैं । दश ग्रामों का देश ग्रामपति और उस पर बीस ग्रामपति होता हैं उससे उपर सौ ग्रामों का अधिपति और हजार ग्रामों का अधिपति होता हैं। ग्रामाध्पिति ग्राम का सारा वृतान्त दशाधिपति को और दशाधिपति विशतिपाल को तथा विशतिपाल शतपाल के पास और शतपाल हजार गँावों के अधिपति को प्रस्तुत करता हैं १ ग्राम में पाँच कर्मचारी नियुक्त करने का उल्लेख हैं । इन सभी कर्मचारियों के कार्य से व्यवस्था सुचारू रुप से चलती हैं । लेखको और गणको को प्रतिदिन पूर्वान्ह चिन्ह लेखा–जोखा प्रस्तुत कर देना चाहिए ।
यजुर्वेद मे राष्ट्र के स्वरुप का वर्णन दिया गया हैं।
ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यरू शुर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढ़ानड्वानाशुरूसप्ति पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठारू सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नरू पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयरू पच्यन्तां योवक्षेमो नरू कल्पताम्।। [5]

3. आदर्श प्रजातन्त्र

राष्ट्र का आधार प्रजा होता हैं यदि प्रजा ही निरंकुश हो, और, वह सभा के अधीन या व्यवस्था में न रहे तो,सब ओर अराजकता फैल जाएगी, इसलिए प्रजा आदर्श बनकर, जन तान्त्रिक नियमों को पालन करने वाला हो।
इसका अभिप्राय यह है कि एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, किन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे, यदि ऐसा न हो तो–

राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तस्माद्राष्ट्री विशं घातुकरू।
विशमेव राष्ट्रायाद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमत्ति न पुष्टं पशुं मन्यत इति।। [6]

जो प्रजा से स्वतन्त्र आधीन राजवर्ग रहे तो (राष्ट्रमेव विश्याहन्ति) राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करें, इसलिए अकेला राजा स्वाधीन वा उन्मत्त होके (राष्ट्री विशं घातुकरू) प्रजा का नाशक होता है अर्थात् (विशमेव राष्ट्रायाद्यं करोति) यह राजा प्रजा को खाये जाता (अत्यन्त पीडिघ्त करता है) इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए, जैसे सिंह वा मांसाहारी ह्ष्टपुष्ट पशु को मारकर खा लेते हैं वैसे (राष्ट्री विशमत्ति) स्वतन्त्र राजा प्रजा का नाश करता है अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता, श्रीमान् को लूट–खूट अन्याय से दण्ड लेके अपना प्रयोजन पूरा करेगा। इसलिए चाहिए की प्रजा को सम्पूर्ण नियमों का पालन करते हुए सभा के अधीन होकर राष्ट्र उत्थान के कार्य करें।

4. मुख्य राज्याधिकारी

जिस प्रकार से घर का संचालक घर का स्वामी होता है परन्तु घर का पूरा व्यवस्था कार्य माँ के हाथों मे होता हैं ठीक उसी प्रकार के अधिकारियों, मन्त्रियों तथा राज्याधिकारियों के द्वारा राज्य का संचालन होता हैं उसमे अनेक गुणों का समावेश होना आवश्यक होता हैं।

सैनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति।। [7]

सब सेना और सेनापतियों के ऊपर राज्याधिकार, दंड देने की व्यवस्था के सब कार्यों का आधिपत्य और सबके ऊपर वर्त्तमान सर्वाधीश, राज्याधिकार इन चारों अधिकारों में सम्पूर्ण वेदशास्त्रों में प्रवीण, पूर्ण विद्यावाले धर्मात्मा जितेन्द्रिय सुशील जनों को स्थापित करना चाहिए अर्थात् मुख्य सेनापति, मुख्य राजाधिकारी, मुख्य न्यायाधीश, प्रधान और राजा– ये चार सब विद्याओं में पूर्ण विद्वान् होने चाहिए।

(क) राजा के गुण

भीष्म जी कहते है दया और उदारता से युक्त राजा धर्माचरण करे किन्तु कटुता न आने दें। आस्तिक रहते हुसे दूसरों के साथ प्रेम का वर्ताव न छोड़े। क्रूरता का आश्रय लिये बिना ही अर्थ संग्रह करें। मर्यादा का अतिक्रमण करते हुए ही विषयों को भोगे। दीनता न लाते हुए ही प्रिय भाषण करें। शूर–वीर बनें किन्तु बढ़ बढकर बातें न बनावें। दानदें, किन्तु अपात्र को नहीं। सहसी हो किन्तु निष्ठुर न हो। दुष्टों के साथ मेल न करें बन्धुओं के साथ लड़ाई झगड़ा न ठाने। जो राजभक्त न हो, ऐसे गुप्तचर से काम न लें। किसी को कष्ट पहुचाये बिना ही आपना कार्य करें। दुष्टों से अपना अभिष्ट कार्य न कहें। अपने गुणों का स्वयं की वर्णन न करें। श्रेष्ठ पुरुषों से उनका धन न छिने। नीच पुरुषों का आश्रय न लें।

अपराध को अच्छी तरह जांच परताल किये बिना ही किसी को दंड न दें। गुप्त मंत्रण को प्रकट न करे। लोभियों को धन न दें। जिन्होंने कभी अपकार किया हों उन पर विश्वास न करें। ईर्ष्या रहित होकर अपनी स्त्री की रक्षा करें। राजा शुद्ध रहे किन्तु किसी से घृणा न करें। स्त्रीयों का अधिक सेवन न करें। शुद्ध और स्वदिष्ट भोजन करें। परन्तु अहित कर भोजन न करें। उदण्डता छोडकर विनीत भाव से मानवीय पुरुषों का आदर सत्कार करें। निष्कपट भाव से गुरुजनों की सेवा करें। दम्भहीन होकर देवताओं की पूजा करें। आनन्दित उपाय से धन सम्पत्ति पाने की इच्छा करें। हट छोडकर प्रीति का पालन करें। कार्य कुशल किन्तु अवसर के ज्ञान से शून्य न हो केवल पिन्ड छुड़ाने के लिए किसी को शांत्वना या भरोशा न दें। किसी पर कृपा करते समय आक्षेप न करें। शत्रुओं को मारकर शोक न करें। अकस्मात किसी पर क्रोध न करें। कोमल होओ परन्तु अपकार करने वाले के लिए नहीं।

राजा का कर्त्तव्य– भीष्म कहते है युधिष्ठिर राजा को चाहिए कि वह ऋष्टि तोमर खडग, तीखें, फरसे, और ढाल आदि तैयार कराके सदा भंडार अपने पास रखे। जिससे शत्रुओं के आक्रामण के समय प्रजा की रक्षाणार्थ सेना के शास्त्र की कमी न होवें जैसे शरद ऋतु का मोर बोलता नहीं उसी प्रकार राजा को मौन रहकर, सदा राजकिया सूचना एकत्र करना चाहिए। राजा को सदैव मधुर वचन बोलना चाहिए। सभाग्रह में या प्रजा से मिलते समय सौम्य मुख मंडल से सोभायमान होकर बातचित करना चाहिए। राजा को शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त होना चाहिए। इस प्रकार हम देखते है कि महाभारत कालीन राजा और राष्ट्र का विकास धर्म में राजा का प्रधान कर्त्तव्य माना जाता था–प्रजा रक्षण या विद्या का प्रसार।

(ख) मंत्री

राजा को सात्विक कुल मे उत्पन्न मंत्री को मंत्री पद पर शुशोभित करना चाहिए। मंत्री को लोभ रहित होना चाहिए। राज्य के परिस्थितियों के अनुसार उपयुक्त सलाह ही मंत्री को राजा को देना चाहिए। राज्य का सदैव मंगल ही मंगल होता है। राजा या किसी के भी द्वारा यदि कभी अपमान हो भी जाए और इतने पर भी मंत्री राजा और राज्य का भला ही सोंचता है तो ऐसे मंत्री को राजा का सम्मान करना चाहिए। भूलकर भी ऐसे मंत्री का राजा को अपमान नहीं करना चाहिए।

मौलान् शास्त्रविदरू शूराँल्लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।
सचितान्सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्।। [8]

मन्त्रियों कों निर्भीक एवं दूसरों के क्षिद्रान्वेषण करने वाला नहीं होना चाहिए। श्रुति एवं स्मृति का ज्ञाता विनयशीलता होना चाहिए। उसे धनी – निर्धन अविद्वान एवं विद्वान सभी पर समान दृष्टि रखना चाहिए। प्रजा द्वारा लाई गई समस्या के मुख्य वादी व प्रतिवादी की बातों कों भली –भांति सुनकर शंतोषकर – निपटारा करने में समर्थ होना चाहिए । मन्त्रि – परिषद के सभी मन्त्रियों को इन सात व्यषनों से पूर्ण रूप से दूर रहना चाहिए शिकार, जुआ, पर– स्त्री प्रसंग, मदिरापन, कामजनित दोष, और मारना गाली बकना तथा दूसरों की चीज खराब कर देना आदि।

(ग) राजदूत

राज्य का संचालन अनेक अधिकारियों के द्वारा होता हैं, उसमे महत्वपूर्ण स्थान राजदूत का होता हैं अन्य देशो के साथ संबंध तथा, राजनैतिक व्यवस्था का बनाए रखनेके लिए राजदूत का होना अति आवश्यक होता हैं और राजदूत के अन्दर अनेक गुणों का होना आवश्यक हैं ।

दूतं चौव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्।
इङ्गिताकारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कुलोद्भतम्।। [9]

जो प्रशंसित कुल में उत्पन्न चतुर, पवित्र, हावभाव और चेष्टा से भीतर हृदय और भविष्यत् में होनेवाली बात को जाननेहारा सर्व शास्त्रों में विशारद चतुर है, उस दूत को राजा सभा के अन्दर रखें। और वह ऐसा हो कि राज–काम में अत्यन्त उत्साह–प्रीतियुक्त, निष्कपटी, पवित्रात्मा, चतुर, बहुत समय की बात को भी न भूलनेवाला, देश और कालानुकूल वर्तमान का कर्त्ता, सुन्दर रूपयुक्त, निर्भय और बड़ा वक्ता हो वही राजा का दूत होने में प्रशस्त है।

5. कार्य विभाग

आदर्श राष्ट्र का पतिबिम्ब उसके राज व्यवज्ञथा से परिलक्षित होता है, और राज्य व्यवस्था उसके कार्य प्रणाली पर निर्भर होता हैं। अक्सर हम वर्तमान रानैतिक परिवेश का अवलोकन करते हैं तों राजधर्म न्याय पालिका,कार्य पालिका, विधायिका के रूप मे प्राप्त होती हैं ठीक उसी प्रकार प्राचीन राज व्यवस्था राज्य के प्रमुख राजपुरूषों या सभासदो को ही कार्य विभाग सौपा जाता था मनुस्मृतिनुसार–

अमात्ये दण्ड आयत्तो दण्डे वैनयिकी किया।
नृपतौ कोशराष्ट्रे च दूते सन्धिविपर्यायो।। [10]

अमात्य को दण्डाधिकार, दण्ड में विनय–क्रिया अर्थात् जिससे अन्यायरूप दण्ड न होने पावे, राजा के आधीन कोश और राजकार्य तथा सभा के आधीन सब कार्य और दूत के आधीन किसी से मेल वा विरोध करना अधिकार देवे।

दूत उसको कहते हैं जो फूट में मेल और मिले हुए दुष्टों को फोड़–तोड़ देवे। दूत वह कर्म करे जिससे शत्रूओं में फूट पड़े।

6. राजकोष

राष्ट्र की शक्ति उसके धनधान्य और वैभव से होती हैं, राष्ट्र की कर व्यवस्था जितनी पारदर्शिता होती हैं। उतना ही राज्य सबल होता हैं। राज्य का संचालन आय पर निर्भर होता हैं यदि कर व्यवस्था ठीक व, उसकी प्रणाली ठीक न हो तो भी राज पंगु हो जाता हैं। इसलिए राजकोष की व्यवस्था किस प्रकार हो इस पर महर्षि मनु का विचार प्रासंगिक हैं।

सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद् बलिम्।
स्याच्चाम्नायपरो लोके वर्त्तेत पितृवन्नृषु।। [11]

वार्षिक कर आप्तपुरुषों के द्वारा ग्रहण करे और जो सभापतिरूप राजा आदि प्रधान पुरुष हैं वे सब, सभा वेदानुकूल होकर प्रजा के साथ पिता समान वर्त्तें।

उस राज्यकार्य में विविध प्रकार के अध्यक्षों को सभा नियत करे। इनका यही काम है– जितने–जितने जिस–जिस काम में राजपुरुष हों वे नियमानुसार वर्त्त कर यथावत् काम करते हैं वा नहीं, जो यथावत् करें तो उनका सत्कार और जो विरुद्ध करें तो उनको यथावत् दण्ड किया करें।

7. क्षात्रधर्म

राजधर्म का अनूयायी राज्य का हर नागरिक होताहै परन्तु राष्ट्र की रक्षा कार्य हमेशा क्षत्रिय के हाथों मे होता हैं क्षत्रिय का धर्म राज्य के नागरिकों तथा राष्ट्र की रक्षा हेतु अपने आप को न्यौछावर कर देना ही क्षत्रिय धर्म हैं । और क्षत्रिय के गुण कैसे हो इस पर मनु का वचन हैं।

समोत्तमाधमै राजा त्वाहूतरू पालयन् प्रजा।
न निवर्त्तेत संग्रामात् क्षात्रं धर्ममनुस्मरन्।। [12]

इस बात के करने से राज्य में विद्या की उन्नति होकर अत्यन्त उन्नति होती है जब कभी प्रजा का पालन करनेवाले राजा को

अपने से छोटा, तुल्य और उत्तम संग्राम में आह्वान करे तो क्षत्रियों के धर्म का स्मरण करके संग्राम में जाने से कभी निवृत्त न हो अर्थात् बड़ी चतुराई के साथ उनसे युद्ध करे जिससे अपना ही विजय हो।

जो संग्रामों में एक–दूसरे को हनन करने की इच्छा करते हुए राजा लोग जितना अपना सामर्थ्य हो, विना डर पीठ न दिखा युद्ध करते हैं वे सुख को प्राप्त होते हैं, इससे विमुख कभी न हो, किन्तु कभी–कभी शत्रु को जीतने के लिए उनके सामने से छिप जाना उचित है क्योंकि जिस प्रकार से शत्रु को जीत सके वैसे काम करें, जैसा सिंह क्रोध से सामने आकर शस्त्राग्नि में शीघ्र भस्म हो जाता है वैसे मूर्खता से नष्ट–भ्रष्ट न हो जावें।

8. राजा का राष्ट्र के प्रति कर्म

राजा को विद्या के प्रसार हेतु उचित व्यवस्था करना चाहिए । क्योकि अर्थ संकट होने पर विद्या ही पुरूष का कल्याण करने में सक्षम हैं। राजा का काम ''कारणिकों '' अर्थात आचार्यो की नियुक्ति की थी। आचार्यसाधारण लोगों को शिक्षा देते थे जहाँ राजकुमार भी शिक्षा प्राप्त करते थे । जरासन्ध से कृष्ण ने ही कहा था कि स्नातक ब्राम्हण,क्षत्रिय, वैश्य,तीनों वर्गो के होते हैं। द्रुपद और द्रोण दोनो ने एक साथ शिक्षा पाई थी। इस प्रकार से अनेक कार्य राजा का राष्ट्र के प्रति वैदिक काल में प्राप्त होते हैं।

9. राष्ट्र रक्षा हेतु स्त्रियाँ

युद्ध पूर्व कुन्ती ने कृष्ण द्वारा अपनें पुत्रों को राष्ट्र की रक्षा एवं स्व –धर्म का सन्देश भेजते हुए कहा था– भिक्षा तुम्हारे लिए वर्जित हैं यह बात कृषि के विषय में भी हैं । तुम अपने बाहु,बल पर जीने वाले क्षत्रिय हो । ''क्षत्रात त्राता'' अर्थात क्ष्त्रिय बचाने वाले। तुम लोग अपने वंश की समृद्धि को साम,दाम, दण्ड, भेद, नीति के उपाय से प्राप्त करों ।

झासी की रानी लक्ष्मी बाई, अवन्तीबाई, दुर्गावती, पदमनी जैसे अनेको रानियों ने इस राष्ट्र की रक्षा में अपने प्राणों की आहुती दी हैं। जो आज भी उतनी ही प्रासंगीक है जितनी कभी अहिल्या, द्रोपदी,सीता, कैकयी, कौसल्या आदि रही।

इस प्रकार से वैदिक ग्रन्थों एवं मनुस्मृति में वैदिक राजधर्म की दशा परिलक्षित होती है। अर्थात् जिस प्रकार से साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति प्राचीन वैदिक काल में हमारे चक्रवर्ती सम्राट अपनाते आये हैं और राजधर्म का पालन करते हुए राजा तथा प्रजा उन्नति को प्राप्त हुए हैं उसी वैदिक राजधर्म प्ररम्परा को पुनरू कार्य प्रणाली में लाने के लिए क्या सम्भव हो सकता है? और वर्त्तमान राजनीति से यह कहाँ तक प्रासंगीक है यही मेरे शोध का उद्देश्य है।

सन्दर्भ

1. शास्त्री राजवीर आचार्य, विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली अ.1 श्लोक.1 पृ. 851
2. सरस्वती दयानन्द स्वामी ऋग्वेद भाष्यम सन् 2005 प्रकाशक –विश्व मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली म.3 शुक्त.38 मन्त्र.6 पृष्ठ– 422
3. सातवलेकर डॉ.श्रीपाद दामोदर पद्मभूषण यजुर्वेदभाष्यम सन 2005 प्रकाशक विश्व मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली –का.15 अनुवाक 2 व.2 मन्त्र.2 पृष्ठ.656
4. सातवलेकर डॉ.श्रीपाद दामोदर पद्मभूषण ४.अथर्ववेदभाष्यम सन 2005 प्रकाशक विश्व मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली –का.19 अनुवाक 7 व.55 मन्त्र.5 पृष्ठ.786
5. उपाध्याय गंगाप्रसाद पण्डित सन् 2003 शतपथ ब्राह्मण प्रकाशक विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द नई सडक दिल्ली का. 13 अनु. 2 ब्रा. 3
6. सरस्वती दयानन्द स्वामी सन् 2005 ऋग्वेद भाष्यम् प्रकाशक मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली अ. 22 मं. 22 पृ. 419
7. कुमार डॉ. सुरेन्द्र प्रोफेसर.विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1996 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली, दिल्ली अध्याय 7
8. शास्त्री राजवीर आचार्य मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली, दिल्ली अ.7 शख्रोक.54 पृष्ठ 260
9. शास्त्री राजवीर आचार्य, विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली अध्याय.7 श्लोक.64 पृ.क्र.262
10. शास्त्री राजवीर आचार्य, विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली अध्याय. 7 श्लोक. 65 पृ.क्र.262।
11. शास्त्री राजवीर आचार्य, विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली अध्याय. 7 श्लोक. 80 पृ.क्र.265
12. शास्त्री राजवीर आचार्य, विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली अध्याय.7 शख्रोक .89 पृ.क्र.266